सत्य एवं निभ्रान्त धर्म है। उनसे पूर्व आम जनता की बात तो क्या कहे, भारतीय तथा पाश्चात्य मनीषियों के लिए भी वेद मात्र कर्मकाण्ड का ग्रन्थ था। सही नहीं उनसे पूर्व वेद के भाष्य इस प्रकार किए गए कि वे मानव मात्र से दूर बहुत दूर होते चले गए। वेदों पर लौकिक इतिहास, अश्लीलता, जादू टोने आदि के आरोप लगाए गए तथा उन्हें गडरियों के गीत तक कहा गया। महर्षि दयानन्द जी ने वेद को सब सत्य विद्याओं का पुस्तक ही नही कहा बल्कि उसे मानव मात्र के लिए अत्यन्त व्यवहारिक और अनुकरणीय बताया। उन्होंने सिद्ध कर दिया कि वेद में आपार ज्ञान-विज्ञान भरा पड़ा है। उन्होंने वेद के आध्यात्मिक स्वरूप को ही हमारे सामने नही रखा बल्कि उसका व्यवहारिक पक्ष भी हमारे सामने रखा। इस सम्बन्ध में योगीराज अरविद घोष ने कहा है कि वेद का अन्तिम सत्य चाहे कुछ भी हो मगर महर्षि दयानन्द जी ऐसे प्रथम महापुरूष थे जिनके पास वेद के रहस्यों को खोलने की असली कुंजी थी। ऋग्वेदादि भाष्य के रूप में वे वह कुंजी आगे आने वाले विद्वानों के लिए सौंप गए हैं।

प्रवचन, शास्त्रार्थ तथा ग्रन्थ लेखन तो उन्होंने किया ही मगर अपने अनुयायिओं के प्रबल अनुरोध पर उन्होंने 7 अप्रैल, 1875 को मुम्बई में आर्यसमाज की सीापना भी की ताकि यह संस्था उनके बाद भी उनके कार्य को सुचारू रूप से करती रहे। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की चिन्तनधारा एकदम सटीक, स्पष्ट तथा सार्वभौतिक और सार्वदेशिकता एवं सार्वकालिता लिए हुए है। उनके द्वारा पुस्तुत विचारधारा इसलिए भी प्रमाणित और सार्थक है क्योंकि वह किसी साधारण व्यक्ति द्वारा अनुमोदित नहीं बल्कि उसका आधार आप्त पुरूष तथा परमात्मा का वेद ज्ञान है। उन्होने अपनी विचारधारा इस प्रकार से विवेचित की है कि सार्वभौमिकता के साथ-साथ उसमें समसामयिकता और राट्रीयता का